Chap-6

षष्ठ अध्याय :

पुष्टिमार्गीय हिन्दी कृतियों का साहित्यिक मूल्यांकन

१. पुष्टिमार्गीय मुख्य हिन्दी गद्य कृतियों का साहित्यिक मूल्यांकन :-

१. पुष्टिमार्गीय मुख्य हिन्दी गद्य कृति ::

पुष्टिमार्गीय मुख्य हिन्दी गद्य कृतियों मे 'वार्ता साहित्य' का नाम पहले आता है। विद्वानों ने पुष्टिमार्गीय गद्य साहित्य पर अनेक संशोधन कार्य किए हैं जिसके फल स्वरूप आज हम वार्ता साहित्य के साहित्यिक रूप को देख पाते हैं। 'आज से ५०० वर्ष पहले गद्य और पद्य पर ब्रज भाषा का अधिकार था तथा हिन्दी भाषा के रूप में ब्रज भाषा का अधिक प्रचार था। अनुसंधान कर्ताओं का विशेष ध्यान ब्रज भाषा गद्य पर ज्यादा रहा। हम स्पष्ट रूप से कह सकते हैं कि ब्रज भाषा का प्रौढ़ और सुव्यवस्थित गधात्मक स्वरूप सर्व प्रथम इसी वार्ता साहित्य में प्राप्त होता है। इसकी दो विशेषताएँ हैं – एक तो इसमें प्राचीन महाकवियों की जीवनी का दर्शन होता है तथा दूसरा इन कवियों का साहित्य इसी भाषा में प्राप्त होता हैं।'[१]

जैसा कि पहले कहा जा चुका है वल्लभाचार्य ने अपने भक्तों को ब्रज भाषा में कृष्णलीला गान करने की प्रेरणा दी थी। वल्लभाचार्य के पश्चात् अन्य पुष्टिमार्गीय आचार्यो विट्ठलनाथ जी, गोकुलनाथ जी, हरिराय जी ने भी ब्रज भाषा हिन्दी को अत्यधिक समृद्ध बनाया और स्वयं तो साहित्य सृजन किया ही, साथ ही अपने शिष्यों – भक्तों को भी प्रेरित किया। यहां तक कि भगवद् सेवा में भी संस्कृत के श्लोकों या वेद मंत्रों के स्थान पर ब्रज भाषा के पदों का गान किया जाने लगा।

विद्वानों के मतानुसार मुख्य पुष्टिमार्गीय ब्रज भाषा गद्य साहित्य में वार्ता साहित्य है, जिससे जुड़ा भावना साहित्य है टीका साहित्य, वचनामृत साहित्य, बैठक चरित्र आदि भी है।

वार्ता साहित्य में वल्लभाचार्य और विट्ठलनाथ जी के अनुयायी भक्तों से सम्बन्धित विभिन्न घटनाओं का संकलन है, साथ ही वल्लभाचार्य जी का जीवन चरित्र, श्री नाथ जी की प्राकट्य वार्ता आदि का संकलन भी है। जो ब्रज भाषा हिन्दी के प्राचीन गद्य के नमूने के रूप में हिन्दी साहित्य के इतिहास में अपना विशिष्ट स्थान रखता है।

२. ब्रज भाषा हिन्दी का साहित्यिक मूल्यांकन ::

वास्तव में ब्रज बोली है जिसके साहित्यिक महत्व के कारण उसे 'ब्रज भाषा' शब्द का प्रयोग कर सम्मानित किया गया है। विद्वानों के मतानुसार हिन्दी की सभी बोलियों की अपेक्षा ब्रज भाषा में सबसे अधिक साहित्य है जिसका मुख्य कारण है वैष्णव आचार्यों का सम्पूर्ण समर्थन, जो भगवान् श्री कृष्ण की भाषा'ब्रज भाषा'की श्री वृद्धि करते रहे हैं। श्री कृष्ण भगवान् की भक्ति के कारण ब्रज भाषा का प्रचार दूर-दूर तक हुआ जैसे उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, गुजरात, मेवाड़ आदि क्षेत्रों में ब्रज भाषा के मधुर गीतों की ध्वनि सुनाई पड़ने लगी। जो आज भी यथावत् है।

वार्ता साहित्य में ब्रज भाषा गद्य का जो रूप है वह दैनिक बोल-चाल की भाषा का है। वार्ता साहित्य में हमें हिन्दी की आधुनिक कहानी का आदि रूप देखने को मिलता है। कहानी का प्राचीन रूप हमें धार्मिक कथाओं में देखने को मिलता है जिसमें धर्म गुरु अपनें सिद्धान्तों का साकार स्वरूप ऐसी वार्ताओं के द्वारा जन- समाज के सामने रखते थे। जिसका असर कथा के कारण शीघ्र ही जन मानस पर होता है।

पुष्टिमार्गीय वार्ता साहित्य यधपि धार्मिक व साम्प्रदायिक धरोहर है किन्तु हिन्दी साहित्य की गद्य परम्परा में इस वार्ता साहित्य का अपना एक विशिष्ट व महत्वपूर्ण स्थान है। वार्ता साहित्य विशेषज्ञ श्री द्वारका दास परीख के मतानुसार ब्रज भाषा का सुव्यवस्थित और प्रौढ गधात्मक स्वरूप सर्व प्रथम इस वार्ता

साहित्य में ही प्राप्त होता है। इन वार्ताओं में ब्रज भाषा का सम्पूर्ण रूप उपलब्ध होता है जिसमें ग्रामीण तथा साहित्यिक शब्दों का प्रयोग हुआ है साथ ही संस्कृत तथा अन्य तत्कालीन प्रचलित भाषाओं के शब्दों का भी प्रयोग हुआ है जो लोग बोल–चाल के दैनिक क्रम में उपयोग करते थे। पुष्टिमार्गीय वार्ता साहित्य की वार्ताएँ साहित्यिक दृष्टि से घटना प्रधान, चरित्र प्रधान, अनुभूति प्रधान, ऐतिहासिक, सामाजिक तथा धार्मिक आदि अनेक श्रेणियों में विभाजित की जा सकती हैं। विद्वानों के मतानुसार वार्ताओं का जो भावनात्मक संस्करण हरिराय जी कृत उपलब्ध है उसमें जातकों की शैली का अंश देखने को मिलता है जिसमें इस जन्म के साथ पूर्व जन्म का हाल जुड़ा हुआ है। इन वार्ताओं में व्यक्ति के जीवन की तीन जन्म की कथा दी गई है–शरण में आने से पहले (आधिभौतिक), शरण में आने के बाद (आध्यात्मिक) तथा मूलभूत आत्म रूप जन्म (आधि दैविक)।

इस वार्ता साहित्य में कई कवियों, भक्तों, महानुभावों के जीवन वृत तथा ग्रन्थों आदि का भी पता चलता है जिसमें उनके जीवन चरित्र की कड़ीया मिलती हैं। यधपि ये सब पुष्टिमार्ग के धार्मिक रंग में रंगा हुआ ही प्राप्त होता है। इस प्रकार हिन्दी साहित्य के जीवनी परक साहित्य का आदि रूप इन वार्ताओं में देखने को मिलता है। तथापि शुद्ध जीवनियों का इनमें अभाव है।

इन वार्ताओं में व्यंग होता है जो सुनने वाले को चोट के साथ सीख देता है। वार्ता में साम्प्रदायिक उपदेश के द्वारा मानवता की दृढ नींव डाली गई है जो मनुष्य, सभ्यता, संस्कृति तथा लोक व्यवहार के सम्बन्ध के प्रतिबिम्ब सा प्रतीत होता है। यह पुष्टिमार्गीय वार्ता साहित्य ब्रज भाषा हिन्दी गद्य के ग्रन्थ हैं जिनमें चरित्र प्रसंगों के साथ–साथ पुष्टि सम्प्रदाय का प्रारम्भिक इतिहास तथा हिन्दी के मध्यकालीन धार्मिक इतिहास पर भी प्रकाश पड़ता है।

वार्ता साहित्य जन साहित्य है इसमें जन जीवन की ऊँची–नीच सभी श्रेणियों का वर्णन है। जब अधिकांश साहित्य पध में रचा जा रहा था तब यह हिन्दी ब्रज भाषा साहित्य गद्य रूप में, वह भी जनता की बोली में लिखा गया जो

अधिक स्वाभाविक और जीवन के निकट रहा है। इन वार्ताओं में तत्कालीन समाज, रीति–रिवाज, धार्मिक–भौगोलिक वर्णन तथा प्रान्तीय वातावरण एवं भाषा का रूप देखने को मिलता है।

इन वार्ताओं में पुष्टि सम्प्रदाय का सम्पूर्ण स्वरूप देखने को मिलता है जैसे भगवद् स्वरूपों के प्राकट्य की कथा, सेवा का प्रकार, आचार्यों का महत्व, भक्तों की अगाध भक्ति आदि। इन वार्ताओं को लोक भाषा में लिखने का तात्पर्य यही था कि इन वार्ताओं से जन समाज को पुष्टि सम्प्रदाय का बोध मिले। विद्वानों के मतानुसार इन वार्ताओं में वर्णित कई घटनाएँ सत्य व ऐतिहासिक महत्व रखती हैं।

अतः साहित्य समाज का प्रतिबिम्ब कहा जाता है और समाज साहित्य का प्रतिबिम्ब होता है। वल्लभाचार्य के पुष्टिमार्ग ने ब्रज भाषा हिन्दी को समृद्ध करने में महत्वपूर्ण योगदान दिया है जिसे हिन्दी साहित्य का इतिहास सदैव याद रखेगा। पुष्टिमार्गीय वार्ता साहित्य का साहित्यिक महत्व उसकी ब्रज भाषा शैली, लेखन का ढंग, जीवन वृत की सामग्री के संबन्ध में मिलता है। मुख्यतः सभी विद्वान इतिहासकारों ने इन वार्ताओं को ब्रज भाषा हिन्दी के उत्कृष्ट गध का नमूना माना है।

२. पुष्टिमार्गीय मुख्य हिन्दी पद्य कृतियों का साहित्यिक मूल्यांकन :-

१. पुष्टिमार्गीय मुख्य हिन्दी पद्य कृति ::

पुष्टिमार्गीय हिन्दी पद्य साहित्य में मुख्य रूप से अष्टछाप कवियों का काव्य आता है जो हिन्दी साहित्य में अपना अद्वितीय स्थान रखता है। अष्टछाप कवियों का काव्य भक्ति भाव से पूर्ण अपने आराध्य भगवान् श्री कृष्ण की ब्रज लीलाओं का गान है। जिसमें मुख्यतः वात्सल्य, साख्य, माधुर्य और दास्य भावों की रस धारा प्रवाहित होती दिखाई देती है। विद्वानों के मतानुसार सभी भाषाओं में काव्य अधिकतर धार्मिक परिवेश में ही जन्मा, पला और पुष्पित हुआ है। अतः हिन्दी काव्य का सर्वांगीण विकास भी धर्म से जुड़ा हुआ है।

अष्टछाप के पूर्ववर्ती कवि गण जैसे जयदेव, विद्यापति और चण्डीदास ने क्रमशः संस्कृत, मैथील और बंग भाषाओं में कृष्ण चरित्र का गान किया था किन्तु भाषा, भाव और शैली की दृष्टि से अष्टछाप के कवियों की रचनाएँ अपना विशिष्ट स्थान रखती हैं। अष्टछाप में मुख्यतः सूरदास ने अपने कृष्ण काव्य में नई मौलिक उद्‌भावनाओं को जन्म दिया, जिसका अनुकरण समकालीन सहयोगियों ने तथा परवर्ती कवियों ने भी किया।

'जयदेव के काव्य में संगीत लहरी और कोमल कान्त पदावली का गौरव तो है, किन्तु इसमें सूरदास की सी कथन की विविधता नहीं है। विद्यापति ने राधा कृष्ण को केवल नायिका–नायक के रूप में चित्रित कर विलासिता को अधिक प्रश्रय दिया है। वे सूरदास की तरह राधा–कृष्ण को अलौकिक धरातल पर स्थापित नहीं कर सके हैं। चंडीदास के काव्य में राधा–कृष्ण के विशुद्ध प्रेम का दर्शन तो होता है, किन्तु इसमें सूरदास की सी लीला–भावना का अभाव है।'[२]

अष्टछाप कवियों का काव्य अपने प्रभु श्री कृष्ण की तल्लीनता की अवस्था के हर्षाश्रु का परिणाम है जो हिन्दी साहित्य जगत् की अनुपम सम्पति कहा जा सकता है। अतः ये अष्टछाप महानुभाव भक्त पहले हैं कवि बाद में।

इन अष्टछाप कवियों का समस्त काव्य 'ब्रज भाषा' में है। इन अष्टछाप कवियों ने ब्रज भाषा को शब्द भण्डार दिया, छन्द दिए, अलंकार दिए, एक जागरूक कल्पना दी, अभिव्यक्ति को अभिव्यंजना दी, जिससें आधुनिक युग तक अनेक विद्वानों ने प्रेरणा लेकर अपने शोध ग्रन्थ प्रस्तुत किए। ब्रज बोली को साहित्यिक ब्रज भाषा के रूप में शक्ति प्रदान करने का कार्य वास्तव में इन अष्टछाप कवियों ने किया। भाषा, भाव, विषय और शैली की दृष्टि से इन अष्टछाप कवियों की रचनाएँ एक सी प्रतीत होती हैं। किन्तु अनुभूति और अभिव्यक्ति की दृष्टि से इन सबका अपना पृथक–पृथक व्यक्तित्व व महत्व है। जिस भक्त की मानसिक वृति जिस लीला में रची है उसी का उसने अपने काव्य में तन्मयता के

साथ चित्रण किया है। इसीलिए डॉ. श्री सोमनाथ गुप्त ने कहा है–'कृष्ण मंदिर के इन पुजारियों के क़ाव्य में एक बड़ी भारी विशेषता है उनका काव्य विश्व काव्य है। इनका प्रत्येक शब्द उठकर ताल देकर कृष्ण का चरित्र गा रहा है। परन्तु उस गान में एक अनोखापन है। बाल कृष्ण के शैशव में, श्री कृष्ण के मचलने में, यशोदा मैया के दुलार में हम विश्व व्यापी माता पुत्र का प्रेम देखते है। राधा और कृष्ण के मिलन में, ईश्वरोन्मुख प्रेम की कल्पना है। गोपियों के विलाप और क्रन्दन में मनुष्य जाति के अन्तरस्थ करुण भाव के रस की व्यंजना है। उन्होंने बाल कृष्ण के चरित्र में आदर्श हिन्दू गृहस्थ की भावना ही प्रकट की है। समाज से सम्बन्ध रखने वाली बडी समस्याओं वर्ण विभाग आदि की ओर ये नहीं जाते। जा भी नहीं सकते–'हरि को भंजे सो हरि का होई' ये सब होते हुए भी ये कवि अपने क्षेत्र के सम्राट हैं सर्वोत्कृष्ट महारथी हैं–विश्व कवि हैं।'[३] अपनी काव्य रचनाओं में प्रेम की बहुरूपणी अवस्थाओं का जो चित्र इन अष्टछाप कवियों ने प्रस्तुत किया है वह वास्तव में अद्‌भुत है। इन अष्टछाप कवियों के काव्य में हृदय को स्पर्श करने वाली द्रावक शक्ति है। इन आठों कवियों ने समान रूप से प्रेम भाव का ही चित्रण अपने काव्य में किया है।

विद्वानों के मतानुसार अष्टछाप का काव्य मुक्तक काव्य है और यह काव्य गेय होने के कारण गीति काव्य के अन्तर्गत आता है। अष्टछाप के काव्य में शब्दों की सजावट, भावों की अभिव्यक्ति और ताल स्वरों की संयोजना बड़ी अनुपम है। पुष्टिमार्ग की सेवा भावना के अनुसार सभी अष्टछाप के कवियों ने कृष्ण की बाल लीला का बड़ा मार्मिक वर्णन किया है। वात्सल्य रस से पूर्ण कृष्ण की बाल क्रीड़ाओं का वर्णन संयोग–वियोग दोनों पक्षों में इन कवियों ने किया है। बाल कृष्ण की क्रीड़ाओं में नंद–यशोदा के सुखानुभव में संयोग पक्ष का निरूपण हुआ है तो कृष्ण के मथुरा गमन पर नंद–यशोदा के विलाप में वियोग पक्ष का वर्णन हुआ है।

'महामुनि भरत ने शृंगार रस के व्यापक महत्व का वर्णन किया है। उनके मतानुसार जगत् में जो कुछ पवित्र, उत्तम, उज्वल और दर्शनीय है वह सब शृंगार रस के अन्तर्गत है। इसी दृष्टिकोण से अष्टछाप के कवियों ने अपनी शृंगार रस पूर्ण रचनाएँ की हैं। इन् रचनाओं से इनका अभिप्राय अपने इष्ट देव की भक्ति भावना का प्रदर्शन करना था।'[४] शृंगार रस के भी दो प्रकार है–संयोग और वियोग पक्ष। संयोग शृंगार में समस्त स्त्री पुरुष के रति भाव का वर्णन मिलता है। अष्टछाप के कवियों ने राधा–कृष्ण के पारस्परिक अनुराग के क्रमिक विकास, उनके संयोग एव वियोग की अनेक चेष्टाओं तथा उनके मान, उपालम्भ, मिलन आदि का वर्णन किया है। अष्टछाप के भक्त कवियों ने काल, अवस्था और परिस्थिति के अनुसार राधा–कृष्ण की रूप माधुरी के अनेक शब्द चित्र अंकित किए हैं। इन अष्टछाप कवियों ने प्रिया–प्रियतम के विहार विषयक विविध प्रसंगों का मनोहर वर्णन किया है.। गोपियों के विरंह वर्णन में वियोग की समस्त दशाओं का मूर्तिमान स्वरूप दिखलाया गया है–'भ्रमर गीत' (भँवर गीत) इसी प्रकार की रचना है। सूर ने तीन भ्रमर गीतों की रचना की है जिनमें से एक भागवत का अनुवाद है और दो उनकी मौलिक रचनाएँ है। नंददास का भ्रमर गीत कथोपकथन की मनोरंजकता, शब्दों की सजावट, संगीत की झंकार और वाक् चातुरी के लिए विशेष रूप से प्रसिद्ध है। अपने काव्य के माध्यम से समग्र साहित्य जगत को भ्रमर गीत परम्परा इन अष्टछाप कवियों ने प्रदान की है। सगुण भक्ति की प्रतिष्ठा तथा निर्गुण का खण्डन भ्रमर गीत की विशेषता है।

काव्य शास्त्र के आचार्यों ने रस को काव्य की आत्मा कहा है। और विद्वानों ने अष्टछाप काव्य को रसों का निचोड़ कहा है। अष्टछाप कवियों ने मुहावरों और लोकोक्तियों का प्रयोग भी प्रचुर मात्रा में किया है। अष्टछाप कवियों ने अनुप्रास, उपमा, उत्प्रेक्षा, रूपक, रूपकातिस्योक्ति आदि अलंकारों का प्रयोग अपने काव्य में किया है।

प्रभु दयाल मीत्तल के मतानुसार 'सूरदास, परमानंददास और नंददास की रचनाएँ काव्य परिमाण और काव्य महत्व दोनों दृष्टियों से बढ़ी-चढ़ी हैं। गोविंद दास और छीत स्वामी की रचनाएँ जितने कम परिमाण में मिलती हैं, उतना ही कम उनका काव्य महत्व भी है। कुम्भनदास, कृष्णदास और चतुर्भुजदास की रचनाएँ काव्य परिमाण और काव्य महत्व दोनों दृष्टियों से मध्यम श्रेणी की हैं।'[५]

अन्तः आज़ भी अष्टछाप का काव्य साहित्य जगत् का स्वर्ण मुकुट है। जो आज भी शिक्षण तथा संगीत क्षेत्र में अपना विशिष्ट स्थान यथावत बनाए हुए है।

२. संक्षिप्त में अष्टछापीय कवियों की मुख्य कृतियों का साहित्यिक विवरण ::

१. सूरदास –

सूरदास की मुख्य तीन रचनाएँ मानी गई है – सूर सागर, साहित्य लहरी और सूर सारावली।

सूर सागर में वास्तव में श्रीमद् भागवद् के दशम स्कन्ध की कथा विस्तार से दी गई है शेष स्कन्धों की कथा संक्षेप में इति वृत्त के रूप में कह दी गई है। साहित्य लहरी में सूरदास के दृष्टि कूट पदों का संग्रह है। इसका वर्ण्य विषय कई रूपों में व्यक्त राधा-कृष्ण का अनुराग है।

सूर सारावली-सूर सागर की ही सारांश सहित भूमिका है। इसमें भागवत के बारहों स्कन्धों का सार एक साथ दिया गया है।

सूर के काव्य में वात्सल्य भाव, दास्य भाव, समर्पण भाव का रस सर्वत्र दृष्टिगोचर होता है। सूर का काव्य पुष्टिवादी भक्ति का प्रतिपादन करता हुआ सा प्रतीत होता है। अपने काव्य द्वारा सूर ने भारत में वल्लभाचार्य के पुष्टिमार्गीय संदेश को घर-घर पहुँचाया और जीवन को प्रेम व समर्पण की ओर मोड़ दिया है। सूर का अपने आराध्य श्री कृष्ण के प्रति दास्य भाव सर्वोच्चता के शिखर का स्पर्श करता है। वात्सल्य और शृंगार दोनों क्षेत्रों में सूर ने अपना अपूर्व सामर्थ्य दिखाया है-बाल लीला, दान लीला, माखन लीला, चीर हरण लीला, रास लीला

आदि अपने काव्य में भ्रमर गीत परम्परा का आरम्भ कर सूर ने सगुणोपासना का निरूपण बड़े ही मार्मिक ढंग से, हृदय की अनुभूति के आधार पर किया है। सगुण–निर्गुण का यह प्रसंग सूर अपनी ओर से लाए थे। सूर ने काव्य में रूपक, उत्पेक्षा, प्रतीप, दृष्टान्त, अतिस्योक्ति, विभावना, अनुप्रास आदि अलंकारों का प्रयोग किया है। सूर ने अपनी काव्य भाषा में संस्कृत शब्दों का प्रयोग भी किया है और प्रचलित विदेशी शब्दों को भी स्वीकार किया है। सूर के काव्य में मुहावरों और कहावतों के प्रयोग भी देखने योग्य है–

''मेरी बात गई इन आगैं अबहिं करत बिनुपानी
जे बुनियै सोई पुति लुनियैं
साँची प्रीति जानि मन मोहन तेरहिं हाथ बिकाने
सूर श्याम तेरैं बस राधा कहति लीक में खाँची
चतुराई अंग अंग भरी है पूरन ज्ञान न बुद्धि की मोठी।
फूँकि फूँकि धरनी पग धारौ
तुम ही बडे महर की बेटी कुल जनि नाऊँ धरैहौं।''[६]

लेखक का मत है कि भाषा का जितना सबल भण्डार अंधे सूर के पास है उतना घनानंद को छोड़ कर ब्रज भाषा के अन्य किसी कवि के पास नहीं है।[७]

उदाहरण पदा

''अब मैं नाच्यौ बहुत गुपाल !
काम–क्रोध कौ पहिरि चोलाना, कंठ विषय की माला।।
महा मोह के नूपुर बाजत, निंदा सब्द रसाल।
भरम भरयौ मन भयौ पखावज, चलन कुसंगत चाल।।
तृस्ना नाद करत घट भीतर, नाना विधि दै ताल।
माया को कटि फैंटा बाँध्यौ, लोभ तिलक दै भाल।।
कोटिक कला काँछ देखराई, जल–थल सुधि नहिं काल।
'सूरदास' की सबै अविधा, दूरि करौ नँदलाल।।''

''मैया ! मैं नहि माखन खायौ।
ख्याल परें ये सखा सबै मिलि मेरे मुख लपटायौ।।
देखि तुही छींके पर भाजन ऊँचैं धरि लटकायौ।
तुही निरखि नान्हें कर अपनैं मैं कैसैं कर पायौ।।
मुख–दधि पोंछ बुद्धि इक कीन्हीं दौना पीठ दुरायौ।
डारि साँटि मुसुकाइ जसोदा स्यामहि कंठ लगायौ।।
बाल बिनोद मोद मन मोहौ भक्ति–प्रताप दिखायौ।
'सूरदास' यह जसुमति कौ सुख सिव विरंचि नहिं पायौ।।''

''मैया ! मोहि दाऊ बहुत खिजायौं।
मोसों कहत मोल कौ लीनौ, तोहि जसुमति कब जायौ।।
कहा कहों एहि रिस के मारै खेलन हौं नहिं जातु।
पुनि–पुनि कहत कौन हैं माता, को है तुम्हारौं तातु।
गोरे नंद, जसोदा गोरी, तुम कत स्याम सरीर।
चुटकी दै–दै हँसत ग्वाल सब, सिखै देत बलबीर।।
तू मोही कौं मारना सीखी, दाउहिं कबहुँ न खीझैं।
मोहन कौ मुख रिस समेंत लखि, जसुमति सुन–सुन रीझैं।।
सुनहु कान्ह ! बलबद्र चबाई, जनमत ही कौ धूत।
'सूर स्याम' मोहि गोधन की सौं, हौं माता तू पूत।।''

''नटवर–भेष धरै ब्रज आवत।
मोर मुकुट मकराकृत कुंडल, कुटिल अलक मुख पर छवि पावत।
भ्रकुटी बिकट, नैन अति चंचल, यहि छवि पर उपमा इक धावत।
धनुष देखि खंजन बिवी डरपत, उड़ि न सकत, उड़िनें अकुलावत।।

अधर अनूप मुरलि सुर–पूरत गौरी–राग अलापि बजावत।
सुरभी बृंद गोप–बालक सँग गावत, अति आनंद बढ़ावत।।
कनक–मेखला कटि पीतांबर, नृत्तत, मंद–मंद सुर गावत।
'सूर स्याम' प्रति अंग माधुरी निरखत ब्रज जन के मन भावत।।''

''मेरे कमल नैंन प्रान तैं प्यारे।
इनकौ कौन मधुपुरी बैठत, राम–कृष्ण दोऊ जन बारे।।
जसुदा कहति सुनहु सफलक–सुत ! मैं पय–पान जतन करि पारे।
ए कहा जानहिं सभा राज की, ए गुरुजन विप्रहु न जुहारे।।
मथुरा असुर–समूह बसत हैं, कर कृपान जोधा हत्यारे।
'सूर दास' स्वामी ये लरिका, इन कब देखे मल्ल अखारे।।''

''ऊधौ ! मोहिं ब्रज बिसरत नाहीं।
हंस–सुता की सुंदर कगरी, अरु कुंजन की छाहीं।।
वे सुरभी, वे बच्छ दोहनी, खरिक दुहावन जाहीं।
ग्वाल बाल सब करत कुलाहल, नाँचत गहि–गहि बाही।।
ये मथुरा कंचन की नगरी, मनि मुकताहल जाहीं।
जबहिं सुरति आवति वा सुख की, जिय उमगत तनु नाहीं।।
अनगत भाँति करी बहु लीला, जसुदा–नंद निबाहीं।
'सूर दास' प्रभु रहे मौन हैं, यह कहि–कहि पछिताहीं।।''

''नृत्यत स्याम नाना रंग।
मुकुटि लटकनि भृकुटि मटकनि धरे नटवर अंग।।
चलत गति कटि रुनित किंकिनि घुंघुरु झनकार।
मनों हंस रसाल बानी अरस–परस बिहार।।

लसति कर पहुँची सो पुंजय मुद्रिका अति ज्योति।
भाव सों भुज फिरति जबहीं तबहिं सोभा होति।।
कबहुँ नृत्यत नारि गति पर कबहुँ नृत्यत आप ।
'सूर' के प्रभु रसिक की मनि रच्यौं रास प्रताप।।''

२. परमानंद दास –

मुख्यतः पुंष्टिमार्ग के कीर्तन संग्रह से मिले पदों का संग्रह कर विद्वानों ने 'परमानंद सागर' ग्रंथ तैयार किया है जो कांकरौली विद्या विभाग से प्रकाशित है।

परमानंद दास ने भी श्री कृष्ण की बाल लीला का सुन्दर वर्णन किया है। परमानंद का काव्य संयोग–वियोगात्मक प्रेम चित काव्य रस की दृष्टि से भी सरस है। परमानंद का काव्य बाल, कान्त और दास भाव की भक्ति से पूर्ण है।

परमानंद ने भी पद रचना में दोहा–चौपाई का प्रयोग किया है। परमानंद ने उपमा, उत्प्रेक्षा, दृष्टान्त आदि अलंकारों का विशेष प्रयोग किया है। परमानंद के काव्य की भाषा भावत्मकता, चित्रमयता, सजीवता जैसे गुणों से ओतप्रोत है। भाषा की सजीवता के लिए परमानंद ने मुहावरों का प्रयोग भी किया है।

अन्तः परमानंद दास का काव्य भाव, भाषा, वर्णन सभी दृष्टियों से उत्कृष्ट जान पड़ता है।

उदाहरण पद

''मनिमय आँगन नंद के, खेलत दोऊ भैया।
गौर–स्याम जोरी बनी, बल कुँवर कन्हैया।।
नूपुर, कंकन, किंकिनी, रुनझुन–झुन बाजै।
मोहि रही ब्रज सुंदरी मनसा सुत लाजैं।।
संग–संग जसोमति रोहिनी, हितकारन मैया।
चुटकी दै–दै नचावहीं, सुत जानि कन्हैया।।
नील–पीट पट ओढ़नी, देखत मोहि भावै।

बाल लीला बिनोद सौ, 'परमानंद' गावै।।''

''तेरौ लाल मेरौ माखन खायौ।
घौस दुपहरी देखि घर सून्यौ, ढोरि-ढँढोरि अबहिं घर आयौ।।
खोलि कपाट पैठि मंदिर में, सब दधि अपने सखनि खवायौ।
छीकैं हूँ तें चढ़ि ऊपर पर, अनभावतौ घरनि ढरकायौ।।
दिन-दिन हानि कहाँ लौ सहिए, ए ढोटा जू भले ढँग लायौ।
'परमानंद प्रभु' बहुत बचति हौं, पूत अनैखौ तैं ही जायौं।।''

''मेरौ माई माधौ सों मन लाग्यौ।
मेरे नैंन और कमलनैंन को इकठौरौ करि मान्यौ।।
लोक वेद की कानि तजी मैं, न्यौती अपनैं आन्यौ।
इक गोविंद चरन के कारन, बैर सबन सों ठाम्यौ।।
अब क्यों भिन्न होय मेरी सजनी ! दूध मिल्यौ जैसै पान्यौ।
'परमानंद' मिली गिरधर सों, है पहली पहचान्यौ।।''

''ब्रज के बिरही लोग बिचारे।
बिन गोपाल ठगे से ठाढे, अति दुर्बल तन हारे।।
मात जसोदा पंथ निहारत, निरखत साँझ सकारे।
जो कोउ कान्ह-कान्ह कहि बोलत, अँखियन बहत पनारे।।
ये मथुरा काजर की रेखा, जे निकसे ते कारे।
'परमानंद स्वामी' बिन ऐसै, जैसे चंदा बिंतु तारे।।''

''कौन बेर भाई चलैरी गोपालै।
हौं ननसार गई ही न्यौते, बार-बार बोलत ब्रज बालै।।

तेरौ तन कौ रूप कहाँ गयौ भामिनि ! अरु मुख कमल सुखाय रहौ।
सब सौभाग्य गयौ हरि के सँग, हृदय सों कमल बिरह दहौ।।
को बोलै, को नैंन उघारै, को प्रति–उत्तर देहि बिकल मन।
जो सर्वस्व अकूर चरायौ, 'परमानंद स्वामी' जीवन धन।।''

''कहा करौं बैकुण्ठहि जाय।
जहाँ नहीं नंद, जहाँ न जसोदा, जहाँ नहीं गोपी–ग्वाल, न गाय।।
जहाँ नहीं जल जमुना कौ निर्मल और नहीं कदमन की छाय।
'परमानंद प्रभु' चतुर ग्वालिनी, ब्रज–रज तजि मेरी जाय बलाय।।''

३. **कुम्भनदास –**

कुम्भनदास के केवल फुटकल पद ही मिलते हैं जो पुष्टिमार्गीय कीर्तन संग्रह में सुरक्षित हैं। कुम्भनदास ने विशष रूप से राधा–कृष्ण के युगल स्वरूप के पद ही गाए हैं। इन पदों मे मधुर भक्ति का भाव विध्यमान है।

विद्वानों ने कुम्भनदास का काव्य साधारण श्रेणी का माना है किन्तु उसमें सरसता और भक्ति भावना की प्रचुरता है।

उदाहरण पद

''आवत मोहन मन जु हरयौ हौ।
हौं गृह अपनें सचु सों बैठी, निरखि बदन अस्वरा बिसरयौ हौ।।
रूप निधान रसिक नँदनंदन, निरखि बदन धीरज न धरयौ हौ।
'कुम्भनदास प्रभु' गोवर्धनदास, अँग–अँग प्रेम–पियूष भरयौ हौ।।''

''देखौ री माई कैसी है ग्वालनि उलटी रई मथनिया बिलोवै।
बिनु नैंना कर चंचल पुनि–पुनि नवनीतै टकटोवै।।
निरखि स्वरूप चोहटि चित लाग्यौ एकै टक गिरधर मुख जोवै।

'कुम्भनदास' चितै रही अकबक औरें भाजन धोवै।।''

''गाय खिलावत स्याम सुजान।
कूँकें ग्वाल टेरि दै ही–ही, बाजत बेंनु बिषान।।
कियौ सिगाँर् घेंनु सगरिनि कौ, को करि–करि सकै बखान।
फिर–फिर फिरत पूँछ उन्नत कै, करि–करि सूधे कान।।
पाँइ पेंजनी, म्हेंदी राजति, पींठि पुरट के पान।
'कुम्भनदास' खेली गिरधर पै, जिहि विधि उठी उठान।।''

''हमारौ दान देउ गुजरेटी।
बहुत दिना चोरी दधि बेच्यौ आजु अचानक भेटी।।
अति सतराति कहा करि हौ तुम बडे गोप की बेटी।
'कुम्भनदास' प्रभु गोवर्धन–धर भुज ओढ़नी लपेटी।।''

''कृष्न तरनि–तनया तीर रास मंडल रच्यौ,
अधर कल मुरलिका वेणु बाजैं।
जुवती जन जूथ संग, निर्तत अनेक रंग,
निरखि अभिमान तजि कामा लाजैं।।
स्याम तन पीत कौसेय शुभ पद नखनि,
चंद्रिका सकल कलिमल हर भुव भाजैं।
ललिता अवतंस संभु धनुष लोचन चपल,
चितवनि मानों मदन–वान साजैं।।
मुखर मंजीर कटि–किंकिनी कुनित रव,
वचन गँभीर जनु मेघ गाजैं।
दास 'कुम्भनदास' कुम्भ दास हरिदास वय,

घरनि नख–सिख स्वरूप अद्‌भुत विराजैं।।''

४. **नंद दास –**

विद्वानों के मतानुसार नंद दास की समस्त रचनाओं में भ्रमरगीत और रास पंचाध्यायी विशेष प्रसिद्ध है।

नंद दास के काव्य की दो विशेषताएँ मुख्य हैं–भाषा की मधुरता और शब्दों की सजावट। मुहावरों, कहावतों तथा ब्रज भाषा के ठेठ शब्दों का प्रयोग नंद दास ने अपने काव्य में किया है। नंद दास ने उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा, संदेह, स्मरण, दृष्टान्त, अतिस्योक्ति आदि अलंकारों का विशेष प्रयोग किया है। नंद दास की काव्य कृतियों में पद तथा दोहा, चौपाई, रोला आदि छन्दों का प्रयोग मिलता है। नंद दास काव्य शास्त्र के ज्ञाता, संस्कृत भाषा के पंडित तथा साम्प्रदायिक सिद्धान्त के आचार्य थे इसका परिचय नंद दास की रचनाओं से मिलता है।

रास–पंचाध्यायी में श्री कृष्ण–गोपियों की रस लीला संबंधि वर्णन है। भ्रमर गीत में गोपी–उद्धव संवाद है जिसमें गोपियों के प्रेमा भक्ति सगुण ब्रह्म का तथा उद्धव के ज्ञान, योग़ और कर्म मार्ग के साथ निर्गुण ब्रह्म का वर्णन है। यहाँ सगुण–निर्गुण के विवाद में अन्त में सगुण की, गोपियों की विजय बताई गई है।

प्रभु दयाल मीत्तल का कथन है–'भाषा की कोमलता, शब्दों की सजावट और भावों की सरसता के साथ साम्प्रदायिक सिद्धान्तों की पुष्टि इन रचनाओं में ऐसी सफलता के साथ हुई है कि वे ब्रज भाषा साहित्य में अपना विशिष्ट स्थान रखती है। इनमें धार्मिकता और साहित्यिकता का सम्मिश्रण गंगा–यमुना के मिश्रित प्रवाह की तरह सर्वत्र दृष्टिगोचर होता है।'[८]

उदाहण पद

''जगावति अपने सुत कों रानी।

उठो मेरे लाल मनोहर सुंदर, कहि–कहि मधुरी बानी।।

माखन, मिश्री और मिठाई, दूध मलाई आनी।

छगन–मगन तुम करहु कलेऊ, मेरे सब सुख दानी।।
जननि बचनं सुनि तुरत उठे हरि, कहत बात तुतरानी।
'नंददास' कीन्हौ बलिहारी, जसुमति मन हरषानी।।''

''कान्ह कुँवर के कर–पल्लव पर मानों गोवर्धन नृत्य करै।
ज्यों–ज्यों तान उठत मुरली की, त्यों–त्यों लालन अधर धरै।।
मेघ मृदंगी मृदंग बजावत, दामिनि दमक मानों दीप जरै।
ग्वाल ताल दै नीके गावत, गायन के सँग सुर जु भरै।।
देत असीस सकल गोपी–जन, वरषा कौ जल अमित झरै।
अति अद्‌भुत अवसर गिरिधर कौ, 'नंददास' के दुःख हरै।।''

''देखो–देखो री नागर नट, निर्तत कालिंदी तट,
गोपिन के मध्य राजै मुकुट लटक।
काछनी किंकिनी कटि, पीतांबर की चटक,
कुंडल की रति, रवि रथ की अटक।।
ततथेई, तातथेई सबद करन उघट,
उरप–तिरप गति, परै पग की पटक।
रास में राधे–राधे, मुरली में एक रट,
'नंददास' गावै, तहँ निपट निकट।।''

''जो गिरि रूचै तो बसौ श्री गोवर्धन, ग्राम रुचै तो बसौ नंदगाम।
नगर रुचै तो बसौ श्री मधुपुरी सोभा सागर अति अभिराम।।
सरिता रुचै तो बसौ श्री यमुना तट, सकल मनोरथ पूरन काम।
'नंददास' काननहिं रूचै तौ, बसौ भूमि वृंदावन धाम।।''

५. **गोविन्द दास –**

गोविन्द दास के रचे पद पुष्टिमार्गीय कीर्तन संग्रह में मिलते हैं। गोविन्द दास ने गोपी–कृष्ण की किशोर और यौवन लीलाओं का ही वर्णन अधिक किया है। गोविन्द दास ने श्री कृष्ण की बाल लीला, गोचारण, राधा–कृष्ण की कुँज लीला आदि से संबंधित पदों की रचनाएँ की है।

विद्वानों का मत है–गोविन्द दास गायक तो परमोच्च श्रेणी के थे किन्तु उनका काव्य साधारण श्रेणी का है।

उदाहरण पद

''प्रात समय उठि जसोमति, दधि मंथन कीन्हों।
प्रेम सहित नवनीत लै, सुत के मुख दीन्हों।।
औटि दूध घैया कियौ, हरि रुचि सों लीन्हों।
मधु मेवा पकवान लै, हरि आगें कीन्हों।।
इहि विधि नित क्रीडा करें, जननी सुख पावै।
'गोविंद प्रभु' आनंद में, आँगन में धावै।।''

''अब हौ या ढोटा तें हारि।
गोरस लेत अटक जब कीनीं, हँसत देत फिर गारी।।
निसि–दिन घर–घर फेरौ करत है, बैलक–जूथ मँझारी।
'गोविंद' बलि, इमि कहति ग्वालिनी, ये बातें कैसें जाता सहारी।।''

''आजु गोपाल रच्यौ है रास, देखत होत जिय हुलास,
नाँचत वृषभान–सुता संग रंगभीने।
गिडि–गिडि तक, थंग–थंग, तत तत तत, थेई–थेई,
गावत केदारौ राग, सरस तान लीने।।
फूले बहु भाँति फूल, परम सुभग जमुना कूल,

मलय पवन बहत गगन, उडुपति गति छीने।
'गोविंद प्रभु' करत केलि, भामिनि रस सिंधु मेलि,
जै–जै सुर सब्द करत, आनंद रस कीने।।''

''कहा करें बैकुंठहिं जाया।
जहाँ नहीं कुंज–लता, अलि, कोकिल, मंद सुगंध न वायु बहाय।।
नहीं वहाँ सुनियत स्त्रवनन बंसी धुन, कृष्ण न मूरत अधर लगाय।
सारस हंस मोर नहीं बोलत, तहँ कौ बसिवौ कौन सुहाय।।
नहीं वहाँ ब्रज, वृंदाबन–बीथिन, गोपी, नंद, जसोदा माय।
'गोविंद प्रभु' गोपी चरनन की, व्रजरज तजि वहाँ जाय बलाय।।''

''ब्रज जन–लोचन ही कौ तारौ।
सुनि जसुमति तेरौ पूत सपूत अति, कुल दीपक उजियारौ।।
धेंनु चरवन जात दूरि जब, होत भवन अति भारौ।
घोष सँजीवन मूरि हमारौ, छिन इत–उत जिन टारौ।।
सात धौस गिरिराज धरयौ कर, सात बरस कौ बारौ।
'गोविंद प्रभु' चिरजीवौं रानी ! तेरौ सुत गोप–बंस रखवारौ।।''

६. कृष्ण दास –

मुख्य रूप से कृष्ण दास के रचे फुट कल पद ही मिलते है जो पुष्टिमार्ग के कीर्तन ग्रन्थों में उपलब्ध हैं।

कृष्ण दास ने भी राधा–कृष्ण के प्रेम को लेकर श्रृंगार रस के पद गाए हैं। कृष्ण दास ने राधा–कृष्ण की प्रेम लीला, रास लीला और खंडिता के पदों की रचनाएँ की हैं। कृष्ण दास का काव्य श्रृंगार –भावना प्रधान है। विद्वानों के मतानुसार कृष्ण दास का काव्य साधारण श्रेणी का है।

उदाहरण पद

''भादों सुदि आठैं उजियारी, आनँद की निधि आई।।
रस की रासि, रूप की सीमा, अँग–अँग सुंदरताई।
कोटि बदन वारों मुसिकानि पर, मुख छवि वरनि न जाई।।
पूरन सुख पायौ ब्रज–वासी, नैंनन निरखि सिहाई।
'कृष्णदास' स्वामिन ब्रज प्रगटी, श्री गिरिधर सुखदाई।।''

''वृंदाबन अद्‌भुत नभ देखियत, बिहरत कान्हर प्यारौ।
गोवर्धनधर स्याम चंद्रमा, जुबतिन–लोचन तारौ।।
सुखद किरन रोमावलि वैभव, उर नव मनिगन हारौ।
ललन जूथ पर भेष विराजत, सुरति स्रमित अनुसारौं।।
ब्रज–जन–नैंन–चकोर मुदित मन, पान करत रसधारौ।
'कृष्णदास' निरखि रजनीकर, जल निधि हुलसौ बारम्बारौ।।''

''परम कृपाल श्री नंद के नंदन, करी कृपा मोहि अपुनौ जानि कै।
मेरे सब अपराध निबारे, श्री वल्लभ की कानि मानि कै।।
श्री जमुनाजल–पान करायौ, कोटिन अध कटवाए प्रान कै।
पुष्टि तुष्टि मन नेम अहर्निसि, 'कृष्णदास' गिरिधरन आन कै।।''

''रास रस गोविंद करत बिहार।
सूर सुता के पुलिन रम्न महँ, फूले कुंद मँदार।।
अद्‌भुत सत दल निकसति कोमल, मुकुलित कुमुद कछार।
मलय पौन बहै, सरद पूर्णिमा चंद्र मधुप झंकार।।
सुघर राय, संगीत–कला–निधि, मोहन नंद कुमार।
ब्रज भामिनि सँग प्रभुदित नाँचत, तन चर्चित धनसार।।

उभय स्वरूप सुभगता सीमा, कोक–कला सुखसार।
'कुष्णदास' स्वामी गिरिधर पिय, पहिरे रस मय हार।।''

७. **छीत स्वामी –**

छीत स्वामी के रचे स्फुट पद ही पुष्टिमार्गीय कीर्तन संग्रह में मिलते हैं। इनके पदों में श्रृंगार के अतिरिक्त ब्रज भूमि के प्रति प्रेम व्यंजना भी अच्छी पाई जाती है। इनकी काव्य भाषा सीधी–सरल है। इनका काव्य साधारण कोटि का है।

उदाहरण पद

''प्रात भयौ, जागो बल–मोहन सुखदाई।
जननी कहै बार–बार, उठो प्रान के आधार,
मेरे दुखहार, स्यामसुंदर कनहाई।।
दूध, दही, माखन, घृत, मिश्री, मेवा, बदाम,
पकवान भाँति–भाँति, विविध रस मलाई।
'छीत स्वामी' गोवर्धनधरि, लाल भोजन करि,
ग्वालन के संग बन, गोचारन जाई।।''

''राधिका, स्याम सुंदर को प्यारी।
नख–सिख अंग अनूप विराजत, कोटि चंद दुति बारी।।
एक छिन संग न छाँडत मोहन, निरखि–निरखि बलिहारी।
'छीतस्वामी' गिरिधर बस जाके, सो बृषभानु दुलारी।।''

''आयौ रितुराज साज, पंचमी बसंत आज,
मोरे द्रुम अति अच्युत, अब रहे फूली।
बेलि लपटीं तमाल, सेत पीत कुसुम लाल,
उदवत सब स्याम भान, भ्रमर रहे झूली।।

रजनी अति भई स्वच्छ, सरिता सब विमल यच्छ,
उडुगन पति अति प्रकास, बरसत रस मूली।
जती–सती सिद्ध–साध, जित–तित भाजे समाज,
विमल जटित तपसी भये, मुनि–मन गति भूली।।
जुवति–जूथ करत केलि, स्याम सुख सिंधु मेलि,
लाज लीक दई पेलि, परसि पगन मूली।
बाजत आवंज उपंग, बांसुरी मृदंग चंग,
यह सुख सब छीत निरखि, ईछा भई लूली।।''

''राधिकारमन, गिरिधरन, श्री गोपीनाथ, मदन मोहन, कृष्ण, नटवर, बिहारी।
रासलीला–रसिक, ब्रज–जुवति, प्रानपति सकल दुख हरन, गोप गायन चारी।।
सुखकरन, जग तरन, नंदनंदन नवल, गोपपति, नारी वल्लभ, मुरारी।
छीतस्वामी हरि सकल जीव उद्धार–हित, प्रकट वल्लभ–सदन दनुजहारी।।''

८. चतुर्भुज दास –

चतुर्भुज दास के रचे स्फुट पद पुष्टिमार्गीय कीर्तन संग्रह में मिलते हैं। इन्होंने अपने पदों में कृष्ण जन्म से लेकर गोपी विरह तक की ब्रज लीला का वर्णन किया है। इनकी काव्य भाषा सुव्यवस्थित और सरस है। इनका काव्य साधारण श्रेणी का है।

उदाहरण पद

''महा महोत्सव गोकुल ग्राम।
प्रेम मुदित गोपी जस गावत्, लै–लै स्यामसुँदर कौ नाम।।
जहाँ, तहाँ लीला अवगाहत, खरिक खोरि दधि मंथन धाम।
परम कुतूहल निसि अरु वासर, आनंद ही बीतत सब जाम।।
नंद गोप–सुत सब सुखदायक, मोहन मूरति, पूरन काम।

'चतुर्भुज प्रभु' गिरिधर आनँद निधि, नख–सिख रूप सुभग अभिराम।।''

''ग्वालिनि तोहि कहत क्यों आयौ।
मेरौ कान्ह निपट बालक, क्यों चोरी माखन खायौ।।
बूझि, विचार देखि जिय अपने, कहा कहों हौं तोहि।
कंचुकि–बंद तोरै ये कैसैं सौ, समुझि परति नहिं मोहि।।
'चतुर्भुजदास' लाल गिरिधर सों, झूठी कहति बनाय।
मेरौ स्याम सकुच कौ लरिका, पर घर कबहुँ न जाय।।''

''प्यारी भुज ग्रीवा मेलि, नृत्यत पीय सुजान।
मुदित परस्पर, लेत गति में सुगति,
रूप–रासि राधे, गिरधरन गुन–निधान।।
सरस मुरली–धुनि सों मिले सप्त सुर,
रास रंग भीने गावैं और तान बंधान।
'चतुर्भुज प्रभु' स्याम–स्यामा की नटनि देखि,
मोहे खग मृग अरु थकित व्योम विमान।।''

''रतन जटित पिचकारी कर लियें, भरन लाल कों भावै।
चोबा, चंदन, अगर, कुमकुमा, विविध रंग बरसावै।।
कबहुँक कटि पट बाँधि निसंक है, लैंन बलासी धावै।
मानों सरद–चंदमा प्रगटयौ, ब्रज–मंडल तिमिर नसावै।।
उड़त गुलाल परस्पर आँधी सों, रहौ गगन सब छाई।
'चतुर्भुज प्रभु' गिरधरनलाल छवि, मोपै बरनि न जाई।।''

******

:: संदर्भ सूची ::

१. वार्ता साहित्य के सन्दर्भ में पुष्टिमार्गीय भक्ति का विकास (शोध प्रबन्ध) – (भूमिका–१)
लोखिका : कोकिलाबेन अम्बाप्रसाद शुक्ल

२. अष्टछाप परिचय – ३३२, लेखक : प्रभु दयाल मीत्तल

३. पृष्टि पाथेय–(ब्रज की लोक कलाएँ–३१०), लेखक : डॉ. कैलाशचन्द्र भाटिया

४. अष्टछाप परिचय – ३३६, लेखक : प्रभु दयाल मीत्तल

५. अष्टछाप परिचय – ३४८,
लेखक : प्रभु दयाल मीत्तल

६. हिन्दी साहित्य का बृहद इतिहास – (५) – ७४
– नागरी प्रचारणी सभा

७. हिन्दी साहित्य का बृहद इतिहास – (५) – ८१
नागरी प्रचारणी सभा

८. अष्टछाप परिचय – ३१४, ३१८
लेखक : प्रभु दयाल मीत्तल

******